श्रीगोविन्दविरुदावली

सङ्गीत

सम्पादिका

डॉ० ऊर्मिला शर्मा

श्रीराधागोविन्द-आराधन-मण्डप-मङ्गल-महोत्सव (जयपुर)

तथा

श्रीचैतन्य-प्रेम-संस्थान (वृन्दावन)

का

सम्मिलित आयोजन

मार्गशीर्ष, कृष्ण नवमी, गुरूवार, २०५२

१६ नवम्बर, १९९५

श्रीरूपगोस्वामि–प्रणीता श्रीगोविन्दविरुदावली

(भरतनाट्यम शैली में सामूहिक नृत्य-प्रयोग)

प्रस्तुति–नृत्यश्री तथा Eollora centre for Performing Arts

निर्देशन–प्रो० को० वें० चन्द्रशेखर

पद-चयन एवं गेय-रचना–प्रो० प्रेमलता शर्मा

नृत्य-रचना–रमा श्रीकान्त, मञ्जरी चन्द्रशेखर, जया चन्द्रशेखर

'तकनीक' विशेषज्ञ–दर्शन पुरोहित

नृत्य– परिमल फड़के
मीनाक्षी कल्याणरामन्
अर्चना अय्यंगार
माधवी
नित्यकल्याणी
सुजाता
अभिज्ञा मेहता
शैलजा शुक्ल
नित्या श्रीकान्त
अमृत अकोलकर
मञ्जरी चन्द्रशेखर
रमा श्रीकान्त

गायन– श्रीमती सुमित्रा राय चौधरी
प्रो० को० वें० चन्द्रशेखर

वाद्य-वृन्द–

नटुवाङ्गम–जया चन्द्रशेखर

मृदङ्गम– आर० नटराजन्

वायलिन–विभास रानाडे

सितार– नारायण भँवरिया

भूमिका

'विरुद' या बिरुद शब्द यश के अर्थ में सुपरिचित है । सङ्गीतशास्त्र में मतङ्ग-कृत बृहद्देशी (छठीं शताब्दी के आसपास) में प्रबन्ध के निरूपण में 'विरुद' का उल्लेख कई बार हुआ है । सङ्गीत-रत्नाकर (तेरहवीं शताब्दी का आरम्भ) में प्रबन्ध के छह 'अङ्गों' को 'प्रबन्ध पुरुष' के दो नेत्र ('पद' और 'तेन'), दो हाथ (पाट और विरुद) और दो पैर (स्वर और ताल) कहा गया है । सङ्गीत-रत्नाकर ४/१०-१८ पर सिंह भूपाल की 'सुधाकर' टीका में बिरुद का निम्नलिखित लक्षण 'सङ्गीतसमयसार' से उद्धृत है:-

"बिरुदशब्दो विरुद्धार्थो महाराष्ट्रे प्रसिद्धितः ।
परेभ्यस्तत्प्रदानेन बिरुदं सूरिभिः स्मृतम् ।।
तद्वीररससंयुक्तं द्विषामुद्वेगदायकम् ।
रसान्तरेण संयुक्तं यत्परं बिरुदं तु तत् ।।"

अर्थात् बिरुद शब्द विरुद्धार्थक है, ऐसी महाराष्ट्र में प्रसिद्धि है । श्रेष्ठ व्यक्तियों को बिरुद दिया जाता है अर्थात् उनका यशोगान होता है , इसलिये बुधजनों ने इसे विरुद कहा है । वह वीररस से युक्त होता है और स्तुत्य के शत्रुओं को उद्वेग देने वाला होता है । जो अन्य रस से युक्त हो वह भिन्न प्रकार का बिरुद है ।

इस लक्षण की व्यञ्जना यह है कि प्रबन्ध में विरुद के समावेश से प्रमुख रूप से नायक को उत्साह दिलाया जाता है ।

नायक में गुणसूचक विशेषण का नाम है बिरुद । नायक लौकिक (राजा या वीर पुरुष) भी हो सकता है और अलौकिक (देव आदि) भी । उत्साह दिलाने की बात लौकिक नायक में ही सार्थक होगी । यह कहना कठिन है कि बिरुदावली की रचना का आरम्भ लौकिक नायक से हुआ या अलौकिक नायक से । साहित्यदर्पण में – "गद्यपद्यमयी राजस्तुतिर्विरुदमुच्यते" – ऐसा लक्षण दिया गया है ।

विरुद शब्द की एक अन्य व्युत्पत्ति इस प्रकार दी जाती है– 'वि' + रुद् रोदने + घ अर्थक क प्रत्यय = विरुद अर्थात् विलक्षण रोदन । प्राचीन काल में विजेता राजा का अनिच्छापूर्वक किया जाने वाला यशोगान ही यह 'विलक्षण रोदन' कहा जा सकता है । "पठन्ति विरुदावलीमहितमन्दिरे बन्दिनः" (रस गंगाधर)। परवर्तीकाल में इस 'विरुद' का अर्थ सामान्यरूप मे उच्च घोषणा और स्तुतिमाला हो गया ।

कुमारस्वामी-कृत 'प्रतापरुद्रयशोभूषण' की टीका में कवि प्रौढोक्ति-सिद्ध क्षुद्र-प्रबन्ध-समूह को 'चाटु-प्रबन्ध' नाम दे कर स्तुतिकाव्य के अन्तर्गत विरुद काव्य की गणना की गयी है ।

विरुदावली-सदृश काव्य का प्राचीन नाम रिव्रस्तीय द्वितीय से द्वादश शताब्दी तक 'भोगावली' था इसी का एक अन्य नाम 'उत्साहकाव्य' हर्षचरित की कविशङ्कर-कृत टीका में मिलता है । अन्यत्र इस का 'विरुद्धकाव्य' नाम भी पाया जाता है । कहीं-कहीं इसे 'वृत्तगन्धि गद्य' भी कहा गया है ।

भक्तिरसशास्त्र के प्रणयन एवं विविध काव्यों की रचना द्वारा

जिन्होंने महाप्रभु श्रीकृष्णचैतन्य की परम्परा को समृद्ध किया एवं जो श्री गोविन्ददेवजू के इस युग में प्राकट्य में निमित्त बने उन श्रीरूपगोस्वामी ने सोलहवीं शताब्दी (ईस्वी) के पूर्वार्द्ध में श्रीगोविन्दबिरुदावली की रचना की । यह देव-स्तुति का उत्तम उदाहरण है । इसी नमूने पर सत्रहवीं शती में श्री रघुनन्दन गोस्वामी ने श्रीगौराङ्ग-बिरुदावली की रचना की ।

वृन्दावन से जयपुर पधारे श्रीगोविन्ददेवजू के मन्दिर में नवनिर्मित दिव्यआराधन-मण्डप के शुभारम्भ के उपलक्ष्य में आयोजित होने वाले मङ्गलमहोत्सव के अवसर पर उक्त श्रीगोविन्दविरुदावली में से कुछ चुने हुए अंश ले कर संगीतमय प्रस्तुति हो सके तो अच्छा हो, ऐसी इच्छा इसी वर्ष मार्च में पूज्यपाद जगद्गुरु श्री पुरुषोत्तम गोस्वामी जी की प्रेरणा से श्री श्रीवत्स गोस्वामी ने मुझ से प्रकट की। तदनुसार कुछ अंशों का चयन कर के उन्हें राग-ताल-बद्ध करके अगस्त प्रथम सप्ताह में भरतनाट्यम् के सुख्यात आचार्य एवं 'कोरिओग्राफर' प्रो० को० वें० चन्द्रशेखरजी को नृत्ययोजना का कार्यभार सौंपा गया । अगस्त के आरम्भ में आप को संयुक्त राज्य अमेरिका के ढाई महीने के दौरे पर निकलना पड़ा । आप की अनुपस्थिति में आप की पत्नी श्रीमती जया चन्द्रशेखर, पुत्री सुश्री मञ्जरी एवं शिष्या श्रीमती रमा श्रीकान्त ने नृत्ययोजना तथा अभ्यास जारी रखा ।

चुने हुए अंशों के क्रम में आप लोगों ने कुछ परिवर्तन किया है जिसके पीछे दृष्टि यही है कि प्रस्तुति में यथासम्भव कुछ क्रमबद्धता लाई जा सके । तदनुसार तीन दृष्टियों से तीन खण्ड रखे गये हैं।

जिनके आरम्भ में प्रस्तावना है, इस में मङ्गलाचरण के दो श्लोक हैं जो केवल गाये जायेंगे । इन के बाद 'अक्षरमयी' नामक पद है, जिस में वर्णमाला के क्रम से प्रत्येक अक्षर से आरम्भ होने वाले विशेषणों द्वारा विरुद कहा गया है ।

इस प्रस्तावना के बाद प्रथम खण्ड (४-१० संख्यक पद) में प्रमुखरूप से बाल्य एवं पौगण्ड वयस् की लीलाओं का वर्णन है, जिनमें से कालियदमन का विस्तार है ।

द्वितीय खण्ड (११-१८ संख्यक पद) स्तुति से प्रारम्भ होता है इस में रतिमय कृष्ण, रासलीला एवं गोपियों के साथ अन्य लीलायें वर्णित हैं । इसी खण्ड में सात विभक्तियों वाला पद लिया है जिस में श्री कृष्ण को कर्ता मान कर अन्य विभक्तियों के साथ नृत्य, संख्या और छन्द की दृष्टि से जोड़ा है । इस के बाद श्रीकृष्ण का मथुरागमन, मल्लयुद्ध तथा कंसवध का वर्णन है ।

तृतीय खण्ड (पदसंख्या १९-२३) में श्रीकृष्ण के अलौकिक स्वरूप का वर्णन है कि वे स्थिति और गति से परे हैं तथा मित्र या शत्रु सभी को अमरत्व-प्रदान करते हैं । कवि कहते हैं कि ऐसे कृष्ण में सदैव हमारी रति रहे ।

अन्त में (पद-२४) भरतवाक्य के समान सब मिलकर श्रीकृष्ण से यह प्रार्थना करते हैं कि वे हमें इस भवसागर से पार करें । इस के पश्चात् कवि-कृत फलश्रुति (पद-२५) से प्रस्तुति पूर्ण होती है।

इस विरुदावली को राग-ताल-बद्ध करने और उस पर नृत्ययोजना करने का काम चुनौतियों से भरा है । गेय की समस्या तो यह कि न तो इस में पद का बन्ध (form) है, न ही सामान्य

छन्दों का बन्ध है। कथा का सूत्र सर्वथा अनुपस्थित होने के कारण नृत्यरचना की अपनी समस्यायें हैं। केवल विशेषणों की लड़ियों को ले कर गेय और नृत्य की रचना ऐसा कार्य है जिस के लिये कोई बनी-बनाई लीक नहीं है। इस विरुदावली की रचना के ४०० से भी अधिक वर्षों के बाद सम्भवतः प्रथम बार इस का गीत-नृत्य-मय प्रयोग हो रहा है। इस के सस्वर पाठ की यदि कोई परम्परा रही भी हो तो आज उस के कोई अवशेष प्राप्त नहीं हैं। अब जो भी प्रयास किया गया है, उसका परीक्षण रसिक जनों के समक्ष प्रस्तुति के समय ही होगा।

इस विरुदावली की विभिन्न इकाइयों को जो नाम दिये गये हैं, वे भी सामान्य छन्दः शास्त्र से भिन्न हैं—तिलकम्, तुरङ्गः, मातङ्गखेलितम् आदि। कुछ पद्य अवश्य ही स्रग्धरा, मालिनी जैसे जाने-पहचाने वार्णिक वृत्तों एवं आर्या जैसे मात्रिक छन्दों में हैं।

सर्वत्र ताल-नाम देना सम्भव नहीं हुआ है। इसलिये मात्रा संख्या का निर्देश अधिकांश स्थलों पर कर दिया गया है। कहीं-कहीं अताल-योजना भी की गई है। पद की कुल २५ इकाइयाँ हैं जिनमें २३ रागों का प्रयोग हुआ है। केवल मङ्गलाचरण एवं भरतवाक्य तथा फलश्रुति में दो-दो श्लोक एक राग में ले लिये गये हैं।

देवोत्थान एकादशी, २०५२
शुक्रवार, ३-११-१९९५

प्रेमलता शर्मा
आम्नाय
२०९/१, करौंदी
वाराणसी-५
२२१००५

श्रीरूपगोस्वामि - प्रणीता श्रीगोविन्दविरुदावली

(चुने हुए अंश)

(१)

मङ्गलाचरण

राग यमन *अताल*

(अनुष्टुप्)

इयं मङ्गलरूपा स्याद् गोविन्दविरुदावली ।
यस्याः पठनमात्रेण श्रीगोविन्दः प्रसीदति ।।

यह गोविन्दविरुदावली मङ्गलरूपा हो, जिसके पढ़ने मात्र से श्रीगोविन्द प्रसन्न होते हैं ।

(२)

राग यमन *त्रिताल*

(स्रग्धरा)

ब्रह्मा ब्रह्माण्डभाण्डे सरसिजनयनः स्रष्टुमुत्क्रीडनानि
स्थाणुं भङ्क्तुं च खेलाखुरलितमतिना तानि येन न्ययोजि।
तादृक्ब्रह्माण्डकोटीवृतजलकुडवा यस्य वैकुण्ठकुल्या
कर्तव्या तस्य का ते स्तुतिरिह कृतिभिः प्रोज्झ्य लीलायितानि।।

(हे गोविन्द !) आप की मति क्रीड़ा से चञ्चल है । आपने कमलनयन स्थविर ब्रह्मा को ब्रह्माण्डरूपी बर्तन में खिलौने बनाने और उन्हें तोड़ने में नियुक्त किया है । आप की वैकुण्ठरूपी नदी उस प्रकार के करोड़ों ब्रह्माण्डरूपी खेलने के छोटे-छोटे कुल्हड़ों से भरी है । ऐसे आप की लीलाओं (के गान) को छोड़कर भला कौन सी स्तुति पुण्यशील जनों द्वारा की जा सकती है ?

(३)

राग खमाज *मात्रा–विभाग ४ , ४*

अक्षरमयी

अच्युत जय जय आर्त–कृपामय ।

इन्द्रमखार्दन ईतिविशातन ।।

उज्ज्वलविभ्रम ऊर्जितविक्रम ।

ऋद्धिधुरोद्धर ॠभुदयापर ।।

ऌदिवकृपेक्षित ॡवदलक्षित ।

एधितबल्लव ऐन्दवकुलभव ।।

ओजःस्फूर्जित औग्र्यविवर्जित ।

अंसविशङ्कट अष्टापदपट ।।

कङ्कणयुतकर खण्डितखलवर ।

गतिजितकुञ्जर घनघुसृणाम्बर ।।

ङूतमुरलिरत चलचिल्लीलत ।

छलितसतीशत जलजोद्भवनुत ।।

झषवरकुण्डल ञोङूयितदल ।

टङ्कितभूधर ठनिभाननवर ।।

डमरघटाहर ढक्कितकरतल ।

णखरधृताचल तरलविलोचन थूत्कृतखञ्जन ।।

धवलावर्धन दनुजविमर्दन ।

नन्दसुखास्पद पङ्कजसमपद ।।

फणिनुतिमोदित बन्धुविनोदित ।

भङ्गुरितालक मञ्जुलमालक ।।

यष्टिलसद्भुज रम्यमुखाम्बुज ।

ललितविशारद बल्लवरङ्गद

शर्मदचेष्टित षट्पदवेष्टित ।

सरसीरुहधर हलधरसोदर क्षणदगुणोत्कर ।।वीर।।

हे अच्युत ! आप की जय हो । आप आर्तजनों पर कृपा-मय हैं । इन्द्र के यज्ञ का आप ने ध्वंस किया है । सङ्कटों को आप काटते हैं । आप का विहार उज्ज्वल है । आप का विक्रम स्फूर्तिमान् है । ऋद्धि की धुरी को आप ऊपर उठाए हुए हैं । ऋभुगणों पर आप दयामय हैं । देवगण आप की कृपादृष्टि चाहते हैं । ऌ अक्षर की भाँति आप अलक्षित हैं । गोपों की आपने वृद्धि की है । आप चन्द्रवंश में उत्पन्न हुए हैं । ओजस् आप में स्फूर्तिमान् है । उग्रता से आप रहित हैं । आप के कन्धे विशाल हैं । आप के वस्त्र सुनहले हैं । आप के हाथों में कङ्कण हैं । दुष्टजनों का आप ने खण्डन किया है । अपनी चाल से आप ने हाथी को जीत लिया है । आप के वस्त्रों का रंग गहरा केसरिया है । आप मुरली-ध्वनि को गुँजाने में रत हैं । आप की भृकुटी चञ्चल है । सैकड़ों सतियों को आप ने छला है । कमल से उत्पन्न (ब्रह्मा) आप को प्रणाम करते हैं । श्रेष्ठ मछली के आकार के आप के कुण्डल हैं । आप ने अपने दल को गाने-बजाने वाला बना दिया है । नाग को आपने (अपने चरण चिह्नों से) टङ्कित या चिह्नित किया है । आप का मुख 'ठ' अक्षर के सदृश गोलाकार है । कलह अथवा मद की घटा (समूह) का

आप हरण करते हैं । आप के करतल (हथेली) ढक्का (दो मुँहवाला छोटा अवनद्ध वाद्य) बजाने में लगे हैं । नख पर आप ने पर्वत को धारण किया था । आप के नयन चपल हैं । खञ्जन पक्षी को अपने नेत्रों के सौन्दर्य से थूत्कार ('थू' 'थू' करना) का पात्र बना दिया है । दानवों का आप मर्दन किया करते हैं । गायों की आप समृद्धि करते हैं । पिता नन्द के आप सुखास्पद अर्थात् आनन्दनिधि हैं। आप के चरण कमल के समान हैं । फणधर (नाग) द्वारा प्रणाम किया जाने पर आप आनन्दित हुए हैं । बन्धुओं को आप ने आनन्द दिया है । आप की अलकें घुँघराली हैं । आप की माला सुन्दर है । आप के हाथ में लाठी सुशोभित है । आप का मुखकमल सुन्दर है । ललित कर्म में आप कुशल हैं । गोपों को आप आनन्द देते हैं । आप की चेष्टाएं आनन्द देने वाली हैं । आप भौंरो से घिरे हैं । आप कमल को धारण किये हुए हैं । हलधर बलराम के आप भाई हैं । आप के गुणों का उत्कर्ष आनन्दप्रद है ।

(४)

राग देश *मात्रा ७*

(तुरङ्ग)

सञ्चलविचकिल-कुण्डल, मण्डितवरतनुमण्डल ।
कुण्डलिपतिकृतसङ्गर, खण्डित-भुवन-भयङ्कर ।।
शङ्करकमलजवन्दित, किङ्करनुतिलवनन्दित ।
गञ्जितसमदपुरन्दर, चञ्चलदमन धुरन्धर ।
बन्धुर-गतिजित-सिन्धुर, चन्दनसुरभित-कन्धर ।।

सुन्दरभुजलसदङ्गद, सङ्गदसखिगणरङ्गद ।

झङ्कृतकरमणिकङ्कण, कुन्तललुठदुरुरङ्गण ।

कुङ्कुमरुचिलसदम्बर, लङ्गिमपरिमलडम्बर ।।

नन्दभवनवरमङ्गल मञ्जुलघुसृणसुपिङ्गल ।

हिङ्गुलरुचिपदपङ्कज ,सञ्चितयुवतिसदङ्गज।।

सन्ततमृगमदपङ्किल,सन्तनु मयि कुशलं किल ।।वीर।।

मुख हिलने के कारण आप के कुण्डल चलायमान हैं । आप ने सुन्दरियों के मण्डल को अलङ्कृत किया है । नागराज के साथ आप ने युद्ध किया था । भुवनों का खण्डन करने से आप भयङ्कर हैं । शिव और ब्रह्मा द्वारा आप वन्दित हैं । दासजनों के प्रणाम-लेश से भी आप आनन्दित होते हैं । मदयुक्त इन्द्र का आप ने दमन किया। चञ्चलजनों का दमन करने में आप धुरन्धर हैं । अपनी सुन्दर गति से आप ने हाथी को जीत लिया है । चन्दन से आप के कन्धे सुगन्धित हैं । आप की सुन्दर भुजाओं में अङ्गद सुशोभित हैं । जो सखियाँ आप को सङ्ग देती हैं , उन्हें आप रङ्ग या आनन्द प्रदान करते हैं । आप के मणिकङ्कण झङ्कार करने वाले हैं । आप के हिलने-डुलने में घुँघराली अलकें डोलती रहती हैं । कुङ्कुम की कान्ति से आप के वस्त्र सुशोभित हैं । नन्द-भवन के आप श्रेष्ठ मङ्गल हैं । सुन्दर केसर के लेप से आप पीत वर्ण हैं । आप के पदकमल पीत कान्ति वाले हैं । युवतियों के कामदेव को आपने सञ्चित किया है । कस्तूरी के पङ्क से आप सदा लिप्त हैं । आप निश्चित रूप से मेरा कुशल-सम्पादन करें । हे वीर !

(५)

राग काफी *मात्रा ४*

स्फुरदिन्दीवर-सुन्दर, सान्द्रतरानन्दकन्दलीकन्द
मां तव पदारविन्दे नन्दय गन्धेन गोविन्द ।
कुन्ददशन बद्धरशन,रुक्मवसन रम्यहसन ।।देव।।

खिलते हुए कमल के समान आप सुन्दर हैं । गाढ़तर आनन्दरूपी कदली-वृक्ष के आप मूल कन्द हैं । हे गोविन्द ! मुझे आपके पदारविन्द में गन्ध से आनन्द दीजिए । आप के दाँतों की पङ्क्ति कुन्द जैसी शुभ्र है । कटि में रस्सी से आप बँधे हुए हैं (माखन की मटकी फोड़ने से रुष्ट यशोदामैया ने बाँध दिया है ।) देव ! आप सुनहला वस्त्र पहने हैं और आप का हास रमणीय है।

(६)

राग तिलङ्ग *मात्रा ४ + ५ = ९*

(मातङ्गखेलितम्)

नाथ हे ! नन्दगेहिनीशन्द, पूतनापिण्डपातने चण्ड ।
दानवेदण्डकारकाखण्ड, सारपौगण्डलीलयोद्दण्ड ।।
गोकुलालिन्द-गूढ गोविन्द, पूरितामन्दराधिकानन्द ।
वेतसीकुञ्ज-माधवीपुञ्ज-लोकनारम्भ-जातसंरम्भ-
दीपितानङ्गकेलिभागङ्ग, गोपसारङ्गलोचनारङ्ग-
कारिमातङ्ग खेलितासङ्ग-सौहृदाशङ्क्योषितामङ्क-
पालिकालम्ब चारुरोलम्ब, मालिकाकण्ठ कौतुकाकुण्ठ।
पाटलीकुन्दमाधवीवृन्दसेवितोत्तुङ्ग-शेखरोत्सङ्ग ।।
मां सदा हन्त पालयानन्त । वीर ।।

हे नाथ ! आप नन्द की गृहिणी (यशोदा) को सुख देने वाले हैं । पूतना का शरीर गिराने (मारने) में आप प्रचण्ड हैं । दानवों को दण्ड देने में अखण्ड, लोहे जैसे सुदृढ़ पौगण्ड की लीलाओं में उद्दण्ड हैं । गोकुल के ओसारे में छिपे हुए गोविन्द ! राधिकाजी में आप अतिशय आनन्द भरते हैं । बेंत के कुञ्ज में माधवी (गोपियों) के समूह को देखना आरम्भ होते ही आप में संरम्भ (उत्साह) उत्पन्न हो जाता है और कामदेव उद्दीप्त हो जाते हैं, ऐसे अनङ्ग की केलि के भाजन आप के अङ्ग हैं । गोपकुल की मृगनयनियों को आनन्द देने वालों में आप उत्तम हैं । क्रीड़ा में आप असङ्ग हैं, स्त्रियाँ आप में सौहृद (सुहृद-भाव) की आशङ्का कर लेती हैं, उनकी अङ्क-श्रेणी के झूले में आप झूलते हैं । आप के केश सुन्दर हैं । आप के कण्ठ में माला है और आप का कौतुक कुण्ठारहित है । पाटली (गुलाब), कुन्द, माधवी आदि पुष्पसमूहों से आप के मुकुट का ऊपर का भाग सजा हुआ है । हे वीर ! आप सदा मेरा पालन करें ।

(७)

राग हंसध्वनि *त्रिताल*

(तिलकम्)

अमलकमलरुचिखण्डनपटुपद,

नटनपटिमहृतकुण्डलिपतिमद ।

नवकुवलयकुलसुन्दररुचिभर,

घनतडिदुपमितबन्धुरपटधर ।

तरणिदुहितृतट-मञ्जुलनटवर,

नयननटनजितखञ्जनपरिकर ।

भुजतटगतहरिचन्दनपरिमल,

पशुपयुवतिगण-नन्दनवरकल ।

नवमदमधुरदृगञ्चलविलसित ,

मुखपरिमलभरसञ्चलदलिवृत ।

शरदुपचितशशिमण्डलवरमुख ,

कनकमकरमयकुण्डलकृतसुख ।

युवतिहृदयशुकपञ्जरनिजभुज ,

परिहित-विचकिल-मञ्जुलशिरसिज ।

सुतनुवदनविधुचुम्बनपटुतर ,

दनुजनिविडमद्डुम्बनरणखर ।।वीर।।

निर्मल कमल की कान्ति को खण्डित करने में आप के चरण कुशल हैं । नृत्य की चातुरी से आप ने नागराज कालिय का मद हर लिया है । आप नव-विकसित नीलकमलों के समूह के सदृश सुन्दर कान्ति से पूर्ण हैं । मेघ पर विद्युत् के सदृश सुन्दर वसन आप धारण किये हुए हैं । सूर्यपुत्री यमुना के तट पर आप सुन्दर नटवर के रूप में विराजमान हैं । नेत्रों को नचाने में आप ने खञ्जनों के समूह को जीत लिया है । आप की भुजाओं पर हरिचन्दन का सुगन्धित लेप है । गोपयुवतियों को आप की श्रेष्ठ कलाएँ आनन्द देने वाली हैं । नवीन मद से मधुर कटाक्षों के विलास से आप शोभित हैं । मुख के परिमल की समृद्धि पर मँडराने वाले भौंरो से आप घिरे हैं । शरत्काल के चन्द्रमा के मण्डल के समान आप

का मुख सुन्दर है । सोने के मकराकृति कुण्डलों से आप सुख देते हैं । आप की भुजाएं युवतियों के हृदयरूपी तोते के लिये पिंजरे के समान हैं । सुन्दर घुँघराले केशों से आप मण्डित हैं । सुन्दरियों के मुखचन्द्र के चुम्बन में आप कुशल हैं । दानवों के समूह के मद को समाप्त करने वाले रण में आप तीक्ष्ण हैं । हे वीर !

(८)

राग बागेश्री *अताल*

(आर्या)

रणति हरे ! तव वेणौ, नार्यो दनुजाश्च कम्पिताः खिन्नाः ।
वनमनपेक्षितदयिताः, करवालान् प्रोज्झ्य धावन्ति ।।

हे गोविन्द ! जब आप का वेणु बज रहा होता है तब नारियाँ (प्रणय-वेग से) कम्पित एवं खिन्न होती हैं, एवं दानव (भय से) कम्पित तथा खिन्न होते हैं, (उस समय) नारियाँ अपने पति आदि की परवाह न कर के, हाथ के शिशुओं को भी छोड़कर वन की ओर दौड़ पड़ती हैं ।

(९)

राग पीलू *मात्रा ८*

(सर्वलघु)

चरणचलनहतजरठशकटक,
रजकदलन वशगतपरकटक ।
नटनघटनलसदगवरकटक,
सकनकमरकतमय-नवकटक ।

कपटरुदित-नटदकठिनपदतट-

विघटितदधिघट-निविडितसुशकट ।

रुचितुलितपुरट- पटलरुचिरपट,

घटितविपुलकट-कुटिलचिकुरघट ।

रविदुहितृनिकटलुठदजरठजट

विटपनिचितवट-तटपटुनरनट ।

निजविलसितहठविचटितसुविकट-

चटुलदनुजघट ! जय युवतिषु शठ ।।वीर !

आपने अपने चरणकमलों से पुराने शकट (छकड़े) को समाप्त किया है । धोबी का आप ने दलन किया है । शत्रुओं की छावनी को आप ने वश में किया है । आप नृत्य करते हुए नागराज की सेना में सुशोभित हैं । आप के नवीन कड़े स्वर्ण और मरकत मणि के बने हैं । आप ने कपटमय रुदन करते हुए अपने मृदु चरण नचाते हुए दही के घड़ों से भरे हुए बड़े सुन्दर शकट (के रूप में आये असुर) को तोड़ा (मारा) है । आप के सुन्दर वस्त्रों की चमक सुवर्ण-पटल के तुल्य है । आप नाना प्रकार की क्रीड़ा करते हैं । घुँघराले केशों की घटा से आप मण्डित हैं । सूर्यपुत्री (यमुना) के निकट आप का सुकोमल केशपाश आन्दोलित हो रहा है । वृक्षों के समूह में वट-वृक्ष के तले आप कुशल नट के रूप में शोभा पाते हैं । अपने विलास के हठ से आप ने विकट और चपल दानवरूपी घट को खण्ड-खण्ड कर दिया है । युवतियों के प्रति आप शठ हैं। हे वीर ! आप की जय हो ।

(१०)

राग आसावरी *मात्रा ७*

पुरुषोत्तम वीरव्रत यमुनाद्भुततीरस्थित,

मुरलीध्वनिपूरक्रिय सुरभिव्रजनादप्रिय ।। धीर ।।

हे पुरुषोत्तम ! आप ने वीरों का व्रत धारण किया है । यमु
के अद्भुत तीर पर आप स्थित हैं । मुरली-ध्वनि के पूरण (भरा
की क्रिया आप करते हैं । गायों के समूह का नाद आप को प्रि
हैं । हे धीर !

द्वितीय खण्ड

(रतिमय कृष्ण)

(११)

राग केदार *मात्रा ४ + ५ = ९*

(समग्रः)

अरिष्टखण्डन स्वभक्तमण्डन

प्रयुक्तचन्दन प्रपन्ननन्दन ।

प्रसन्नचञ्चल स्फुरद्दृगञ्चल

श्रुतिप्रलम्बक भ्रमत्कदम्बक ।।

प्रकृष्टकन्दरप्रविष्ट सुन्दर

स्थविष्ठसिन्धुरप्रसर्पबन्धुर ।।देव।।

आप विघ्नों, अनिष्टों का खण्डन करते हैं, अपने भक्तों को पुष्ट करते हैं । आप ने चन्दन का प्रयोग किया है । शरणागतजनों

को आप आनन्द देते हैं । आप प्रसन्न और चञ्चल हैं । आप के नेत्रों के कोने स्फुरणशील हैं । आप के कानों में लटकते हुए कदम्ब पुष्प झूमते हैं । हे सुन्दर ! उत्तम कन्दरा में आप ने प्रवेश किया। सुदृढ़ विशाल हाथी के सदृश चाल से आप सुन्दर हैं । हे देव !

(१२)

राग बिहाग *मात्रा ४ + ४*

वृन्दारकतरुवीते वृन्दावनमण्डले वीर ।

नन्दितबान्धववृन्द, सुन्दर ! वृन्दारिका रमय ।।

खलिनीडुम्बक मुरलीचुम्बक ।

जननीवन्दक पशुपीनन्दक ।। वीर !।

सुरतरुओं अर्थात् कल्पतरुओं से घिरे हुए वृन्दावन मण्डल में, जिसमें आपने बान्धवों को आनन्द दिया है, हे सुन्दर ! देव-रमणियों को रमण कराओ । आप (पूतना जैसी) दुष्टाओं के संहारक हैं, मुरली को आप चूमते हैं, माता का आप वन्दन करते हैं, गोपियों को आप आनन्द देते हैं, हे वीर !

(१३)

राग हमीर *त्रिताल*

(मालिनी वृत्त)

अनुदिनमनुरक्तः पद्मिनीचक्रवाले

नवपरिमलमाद्यच्चञ्चरीकानुकर्षी ।

कलितमधुरपद्मः कोऽपि गम्भीरवेदी

जयति मिहिरकन्याकूलवन्याकरीन्द्रः ।।

पद्मिनियों (पद्मिनी स्त्रियों) के चक्रवाल (समूह) में अनुदि
अनुरक्त रहने वाला कृष्ण-रूपी श्रेष्ठ हाथी जययुक्त है । वह नवी
परिमल पर मदमत्त होने वाले भ्रमरों को आकर्षित करता है, उस
मधुर कमलों को जुटा रखा है । वह मानो कोई गम्भीरवेत्ता (ज
की गहराई अथवा चित्त की गहराई को जानने वाला) सूर्यकन्य
(यमुना) के तट की वनराजि में विहार करता है ।

(१४)

राग मालकौंस *झपताल*

(गुच्छः)

जय जलदमण्डलीद्युतिनिक्हसुन्दर,
स्फुरदमलकौमुदी-मृदुहसितबन्धुर ।
व्रजहरिणलोचनावदनशशिचुम्बक,
प्रचुरतरखञ्जनद्युतिविलसदम्बक ।
स्मरसमरचातुरीनिचयवरपण्डित,
प्रणययुतराधिकापटिमभरभण्डित ।
क्वणदतुलवंशिकाहृतपशुपयौवत,
स्थिरसमरमाधुरीकुलरमित-दैवत ।
ग्रथितशिखिचन्द्रकस्फुटकुटिलकुन्तल,
श्रवणतटसञ्चरन्मणिमकरकुण्डल
ग्रथितनवताण्डवप्रकरगतिमण्डल,
द्विजकिरणधोरणीविजितसिततण्डुल ।
स्फुरितवरदाडिमीकुसुमयुतकर्णक,
छदनवरकाकलीहृतचटुलतर्णक ।।धीर।।

मेघ-मण्डली के द्युति-पुञ्ज के समान सुन्दर ! आप की जय हो । आप निर्मल चन्द्रिका के समान मन्द मुस्कान से रमणीय हैं। व्रज की मृगनयनियों के मुखचन्द्र के आप चुम्बक हैं । प्रचुरतर खञ्जनों की शोभा से आप के नेत्र मण्डित हैं । काम-युद्ध की अतिशय चातुरी में आप प्रवीण पण्डित हैं । प्रणययुक्त राधिका के अतिशय कौशल से आप मुदित हैं । गूँजती हुई अनुपम वंशी के द्वारा गोप-युवतियों के समूह का हरण करते हैं । युद्ध में स्थिरता की माधुरी से देवताओं को आप ने प्रसन्न किया है । सुन्दर मोर-पंख का चन्द्रक आप के घुँघराले केशों में बंधा हुआ है और शोभा पा रहा है । दोनों कानों में मकराकृति मणि-मय कुण्डल हिल रहे हैं । आप के नित्य नवीन नृत्य से विविध गति-मण्डल प्रकट हो रहे हैं । आप के दाँतों की द्युति-किरणों की पङ्क्ति श्वेत तण्डुलों की पङ्क्ति को जीत रही है । खिले हुए श्रेष्ठ अनार के पुष्प से युक्त आप के कान हैं । सुन्दर ओंठों से विशिष्ट ध्वनि निकालते हुए आप चञ्चल बछड़ों को टेरते हैं ।

(१५)

राग पूर्वी *मात्रा ५ + ४ = ९*

(कुन्दम्)

नन्दकुलचन्द्र लुप्तभवतन्द्र
कुन्दजयिदन्त दुष्टकुलहन्त
रिष्टसुवसन्त मिष्टसदुदन्त
सन्दलितमल्लि - कन्दलितवल्लि -

गुञ्जदलिपुञ्ज - मञ्जुतरकुञ्ज -

लब्धरतिरङ्ग हृद्यजनसङ्ग

शर्मलसदङ्ग हर्षकृदनङ्ग

मत्तपरपुष्ट - रम्यकलघुष्ट

गन्धभरजुष्ट - पुष्पवनतुष्ट

कृत्तखलयक्ष युद्धनयदक्ष

वल्गुकचपक्ष-बद्धशिखिपक्ष

पिष्टनततृष्ण तिष्ठ हृदि कृष्ण ।।वीर।।

नन्द के कुल के चाँद ! आप ने संसार-रूपी तन्द्रा का लो[redacted] किया है । आप के दाँत कुन्द की शोभा को जीतने वाले हैं । आप[redacted] ने दुष्टों के कुलों का संहार किया है । आप सौभाग्य के सुन्द[redacted] वसन्त हैं । आप का वर्णन मीठा और पवित्र है । मल्लिका पुष्प[redacted] के गुच्छे जिन लताओं पर लदे हुए हैं, उन पर भ्रमरों के समूह गूँजते[redacted] हैं, ऐसे अत्यन्त सुन्दर कुञ्ज में आप ने रतिरङ्ग प्राप्त किया है[redacted] मनोहर जन आप के साथ हैं, आप के अङ्ग आनन्द से चमकते हैं । कामदेव को आप हर्ष देने वाले हैं । मत्त कोकिल की रमणीय ध्वनि के सदृश आप का घोष है । गन्ध के भार से भरे हुए पुष्पों के वन से आप सन्तुष्ट हैं । दुष्ट यक्ष को आप ने काटा है । युद्ध की नीति में आप दक्ष हैं । आप के सुन्दर केशों के काकपक्ष में मयूरपिच्छ बँधा हुआ है । शरणागत की तृष्णा का आप नाश करते हैं । हे कृष्ण ! आप मेरे हृदय में निवास करें । हे वीर !

(१६)

राग भीमपलासी *मात्रा ८ + ८*

(साप्तविभक्तिकी कलिका)

यः स्थिरकरुणस्तर्जितवरुणस्
तर्पितजनकः संमदजनकः ।।प्र०।।
प्रणतविमायं जगुरनपायं
घनरुचिकायं सुकृतिजना यम् ।।द्वि०।।
सुजनकलितकथनेन प्रबलदनुजमथनेन
प्रणयिषु रतमभयेन प्रकटरतिषु किल येन ।।तृ०।।
यस्मै परिध्वस्तदुष्टाय चक्रुः स्पृहां माल्यजुष्टाय
दिव्याः स्त्रियः केलितुष्टाय कन्दर्परङ्गेण पुष्टाय ।।च०।।
धृतोत्साहपूराद् द्युतिक्षिप्तसूराद्
यतोऽरिर्विदूराद् भयं प्राय शूरात् ।।पं०।।
यस्योत्तमाङ्गस्य सच्चार्यपाङ्गस्य
वेणुर्ललामस्य हस्तेऽभिरामस्य ।।ष०।।
स्मितविस्फुरितेऽजनि यत्र हिते
रतिरुल्लसिते सुदृशां ललिते ।।स०।।
स त्वं जय जय दुष्टप्रतिभय
भक्तस्थिरदय लुप्तव्रजभय ।।वीर।।

१. जो स्थिर करुणा से युक्त हैं, जिन्होंने वरुण का वर्जन

किया है, जिन्होंने अपने पिता को तृप्त किया है जो सम्यक् म[redacted]
को उत्पन्न करते हैं –

२. पुण्यशील जनों ने जिन्हें–प्रणतजनों की माया को दूरकरने[redacted]
वाला, अव्यय, मेघ जैसी कान्ति से युक्त काया वाला कहा है–

३. जिन्होंने सुजनों के प्रति सुन्दर वचन कहे हैं, प्रबल दनुजों का मथन किया है, जो अभय हैं और जिन्होंने प्रकट रति वाले प्रेमीजनों में रमण किया है –

४. जिन्होंने दुष्टों को सर्वथा ध्वस्त किया है, जो माला से सुशोभित हैं, जो कामदेव के रङ्ग से पुष्ट हैं, जो केलि से तुष्ट हैं, ऐसे जिन के प्रति दिव्य स्त्रियों ने स्पृहा की थी –

५. जो उत्साह के पूर को धारण किये हुए हैं, अपनी द्युति से जिन्होंने सूर्य को भी तुच्छ बना दिया है, ऐसे जिन शूर से शत्रु दूर से ही भय को प्राप्त हुआ –

६. उत्तम अङ्गों वाले, सञ्चरणशील कटाक्षों वाले, जिन अभिराम, ललाम (श्री कृष्ण) के हाथ में वेणु है –

७. जिन में स्मित का विकास हुआ है, जो हितकारी हैं, उल्लसित हैं, ऐसे जिन में सुन्दरियों की रति उत्पन्न हुई –

सम्बोधन– ऐसे आप दुष्टों के प्रति भयकारी हैं, भक्तों के प्रति स्थिर दया वाले हैं, जिन्होंने व्रज का भय मिटाया है, ऐसे हे वीर ! आप की जय हो ।

(१७)

राग शुद्धसारंग मात्रा ४ + ४

(आर्या)

मधुरेश ! माधुरीमय माधव ! मुरलीमतल्लिकामुग्ध !

मम मदनमोहन ! मुदा, मर्दय मनसो महामोहम् ।।

हे मधुरेश ! माधुरीमय ! माधव ! आप श्रेष्ठ मुरली पर मुग्ध हैं । हे मदनमोहन ! आप हर्षपूर्वक मेरे मन के महामोह को मिटाएं।

(१८)

राग तिलककामोद *मात्रा १०*

(उपजातिवृत्त)

रङ्गस्थले ताण्डवमण्डलेन

निरस्य मल्लोत्तमपुण्डरीकान् ।

कंसद्विपं चण्डमखण्डयद् यो

हृत्पुण्डरीके स हरिस्तवास्तु ।।

रङ्गमण्डप में नृत्य-मण्डल के द्वारा जिस ने उत्तम मल्लरूपी कमलों का निरास कर डाला था और कंस रूपी प्रचण्ड हाथी को खण्डित कर डाला था, वह हरि तुम्हारे हृदयकमल में वास करे । ('हरि' में यहाँ श्लेष है—कंसरूपी हाथी के प्रसङ्ग में सिंह और वैसे श्रीकृष्ण ये दोनों अर्थ हैं ।)

तृतीय खण्ड

(श्रीकृष्ण के अलौकिक स्वरूप का वर्णन)

(१९)

राग शंकरा *मात्रा १६*

(अच्युतः)

जय जय वीर ! स्मर-रस-धीर !
द्विजजितहीर ! प्रतिभटवीर !
स्फुरदुरुहार ! प्रियपरिवार-!
च्छुरितविहार ! स्थिरमणिहार !
प्रकटितरास ! स्तबकितवास !
स्फुटपटवास ! स्फुरितविलास !
ध्वनदलिजाल-स्तुतवनमाल !
व्रजकुलपाल ! प्रणयविशाल !
प्रविलसदंस-भ्रमदवतंस !
क्वणदुरुवंश-स्वनहृतहंस,
स्तनघनराग-श्रितपरभाग ।।वीर।।

हे वीर ! आप की जय हो, जय हो । आप कामदेव के रस में धीर हैं अर्थात् अधीर नहीं होते । आप ने अपने दाँतों से हीरे को जीत लिया है । प्रतियोद्धाओं के प्रसङ्ग में आप वीर हैं । आप

का श्रेष्ठ हार स्फुरित होता है। अपने प्रियजनों के परिवार के साथ विहार में आप संलग्न हैं। आप स्थिर-मणि का हार पहने हैं। आप ने रास को प्रकट किया है। आप के वस्त्र घेरदार या झालरदार हैं। आप के रेशमी वस्त्र सुन्दर हैं। आप का विलास स्फुरित होता है। गूँजते हुए भ्रमरों के जाल के द्वारा आप की वनमाला की स्तुति होती है। व्रज के कुलों का आप पालन करते हैं। आप का प्रणय विशाल है। आप के कन्धों पर कानों के कुण्डल झूलते हैं। श्रेष्ठ वंशी की ध्वनि से आप ने परमहंसों का हरण कर लिया है। (गोपियों के) स्तनों पर लिप्त कुङ्कुम पर आप का मस्तक टिका रहता है।

(२०)

राग दुर्गा *मात्रा ५+५+३+३+३+३=२२*

(मालिनी वृत्त)

स्थितिनियतिमतीते धीरताहारिगीते
प्रियजनपरिवीते कुङ्कुमालेपपीते ।
कलितनवकुटीरे काञ्च्युदञ्चत्कटीरे
स्फुरतु रसगभीरे गोष्ठवीरे रतिर्नः ।।

जो स्थिति और गति के अतीत हैं, जिन का गीत धैर्य का हरण कर लेता है, प्रियजनों से जो घिरे हुए हैं, कुङ्कुम के लेप से जो पीत वर्ण हैं, जिन्होंने नया कुटीर बनाया है, जिनकी कटि पर काञ्ची चमक रही है, जो रस की गहराई में उतरे हुए हैं, जो गोष्ठ (गोपों की बस्ती) में वीर हैं, उनमें हमारी रति स्फुरित हो।

(२१)

राग सिन्धूरा *मात्रा ५ + ५*

(उपजाति वृत्त)

चित्रं मुरारे ! सुरवैरिपक्षस्—
त्वया समन्तादनुबद्धयुद्धः ।
अमित्रमुच्चैरविभिद्य भेदं
मित्रस्य कुर्वन्नमृतं प्रयाति ।।

हे मुरारे ! बड़े आश्चर्य की बात है, देवों के शत्रुओं अर्थात् दानवों ने सब ओर से तुम्हारे साथ युद्ध ठान लिया, अमित्र (शत्रु) का भेद न करते हुए मित्र (सूर्य) का भेदन करते हुए (पार जा कर) ऊपर अमृतलोक में पहुँच रहे हैं।

(२२)

राग गौड़सारंग *अताल*

चारुतट-रासनट गोपभट पीतपट
पद्मकर दैत्यहर कुञ्जचर वीरवर !
नर्ममय कृष्ण जय ! नाथ ।।

(यमुना के) सुन्दर तट पर आप रास के नट हैं । गोपयोद्धा, पीतपटधारी, हाथ में कमल धारण किये हुए, दैत्यों का हरण करने वाले, कुञ्जविहारी, श्रेष्ठवीर, नर्म (रसिकता) से युक्त, कृष्ण ! आप की जय हो ।

(२३)

राग अहीरभैरव *त्रिताल*

(आर्या)

दानवघटालवित्रे धातुविचित्रे जगच्चित्रे ।

हृदयानन्दिचरित्रे रतिरास्तां बल्लवीमित्रे ।।

दानवों की घटा को काटने वाले, धातुओं (खनिजों) से रंग बिरंगे, जगत् रूपी 'चित्र' से आप प्रकट होते हैं, आप का चरित्र हृदय को आनन्द देने वाला है, गोपियों के आप मित्र हैं आप में हमारी रति हो ।

(२४)

(भरतवाक्य)

राग भैरवी *मात्रा ४*

(मालिनी वृत्त)

विवृतविविधबाधे भ्रान्तिवेगादगाधे

बलवति भवपूरे मज्जतो मेऽविदूरे !

अशरणगणबन्धो ! हे कृपाकौमुदीन्दो !

सकृददकृतविलम्बं देहि हस्तावलम्बम् ।।

जिस में विविध बाधाओं का विस्तार हुआ है, भँवरों के वेग से जो अगाध है, ऐसे बलवान् भवरूपी प्रवाह में मैं आप के समीप ही डूब रहा हूँ । हे अशरणजनों के बन्धु ! हे कृपाचन्द्रिका के चन्द्र! एक बार बिना विलम्ब किये मुझे हाथ का सहारा दीजिए ।

(२५)

फलश्रुति

राग भैरवी *अताल*

(अनुष्टुप्)

रम्यया विरुदावल्या प्रोक्तलक्षणयुक्तया !

स्तूयमानः प्रमुदितो वासुदेवः प्रसीदति ।।
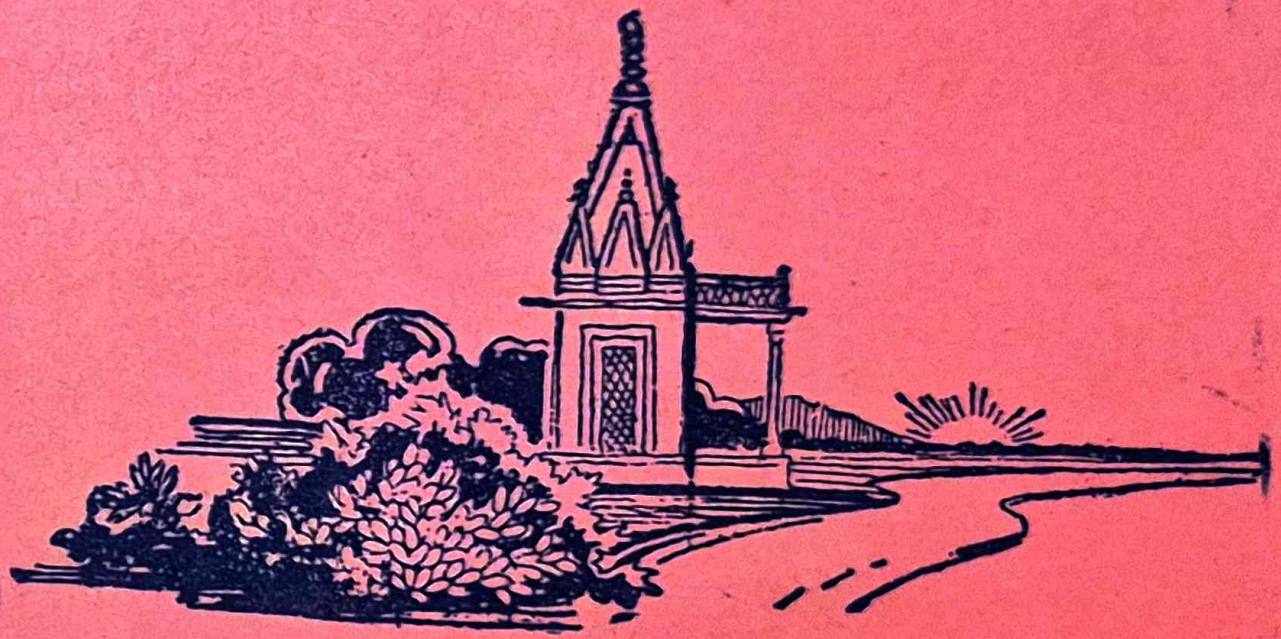
रमणीय बिरुदावली, जो कि कहे गए लक्षण से युक्त है, से जब वासुदेव की स्तुति होती है तो वे प्रसन्न होते हैं ।।